वैदिक बाल-शिक्षा

[चतुर्थ भाग]

स्वामी विद्यानन्द 'विदेह'

वेद-संस्थान, अजमेर

१९८०

चतुर्थ भाग

संस्थान-प्रकाशन-संख्या : ८१

सम्पादिका : वीणा गोयल, एम ए (संस्कृत)

द्वितीय संस्करण : श्रावण, २०३७ वि; अगस्त, १९८० ई

(५,००० प्रतियां)

प्रकाशक : वेद-संस्थान, वावू मोहल्ला, ब्यावर रोड, अजमेर ३०५ ००१

मुद्रक : वैदिक यन्त्रालय, अजमेर

१ देवों की सुमति

वयं देवानां सुमतौ स्याम । यजुर्वेद ३४.३७

(वयम्) हम (देवानाम्) देवों की (सु-मतौ) सु-मति में (स्याम) रहें ।

प्यारे बच्चो !

ऊपर लिखी वेद की इस सूक्ति को तुम कण्ठाग्र कर लो । इस सूक्ति में तुम्हारे लिए बड़ी सुन्दर शिक्षा निहित है । यदि तुम इस पर श्रद्धापूर्वक आचरण करोगे तो तुम दिव्य देव बन जाओगे और सदा सुखी तथा आनन्दित रहोगे ।

तुम सदा कामना किया करो और प्रभु से प्रार्थना किया करो, 'हम देवों की सुमति में रहें ।' देवों की सुमति में रहने से सदा सुख और सम्पदा बढ़ती है । उसके विपरीत, असुरों अथ वा दुर्जनों की कुमति में रहने से दुःख और विपत्ति की वृद्धि होती है । गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं,

जहां सुमति तहां सम्पति नाना ।
जहां कुमति तहां विपति निधाना ।

दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव से जो युक्त हों उन्हें देव वा देवी कहते हैं । देव जन शुद्ध, सदाचारी, निर्व्यसन और परोपकारी होते हैं । देवों के विचार, भावना और व्यवहार नितान्त शुद्ध होते हैं । जो भी उनके सम्पर्क में आता है, वे उन्हें सुमति वा सुविचार प्रदान करते हैं । याद रखो, जिनकी मति सुमति और जिनके विचार सुविचार होते हैं उन्हीं का आचार और व्यवहार पवित्र होता है । आचार और व्यवहार की पवित्रता से ही सच्चा सुख और आनन्द मिलता है । अतः तुम सदैव देवों और देवियों के पास बैठा करो, ध्यान से उनकी बातें सुना करो और उनके विचारों को ग्रहण किया

करो। ऐसा करने से तुम सुमति से युक्त रहोगे और सदा सुकर्म किया करोगे, जिससे तुम्हारा यश बढ़ेगा।

बुरों की संगति में मत बैठो, बिगड़ेंगे आचार-विचार।
देवों की संगति में बैठो, सुधरेंगे आचार-विचार।

२ पवित्रता

पुनन्तु मा देवजनाः। ऋग्वेद ९.६७.२७, यजुर्वेद १९.३९, अथर्ववेद ६.१९.१

(पुनन्तु) पवित्र करें (मा) मुझे (देव-जनाः) देव-जन।

प्यारे बच्चो !

ऊपर लिखी वेद की सूक्ति में तुम्हारे लिए बड़ी ही सुन्दर प्रेरणा है। इसे तुम अर्थसहित आसानी से याद कर सकते हो।

माता देव है। तुम मातृभक्त बनो। माता को पूज्य मानकर उनके आदेशों का पालन करो। अच्छी माता अपने बच्चों को बुरी बातों से रोकती है और अच्छी बातें बताती है। तुम माता के आदेशों का पालन करोगे तो तुम्हारा जीवन बड़ा पवित्र हो जाएगा।

पिता देव है। तुम पितृभक्त बनो। अपने पिता को पूज्य जानकर उनकी आज्ञाओं तथा शिक्षाओं का श्रद्धा के साथ पालन करो। अच्छे पिता अपने बच्चों को बुरी बातों से वर्जते और अच्छी बातों से जोड़ते हैं। तुम अपने पिता की शिक्षाओं पर आचरण करोगे तो तुम्हारा जीवन शुद्ध-संशुद्ध हो जाएगा।

आचार्य देव है। अध्यापक देव है। अच्छे आचार्य विद्या पढ़ाने के अतिरिक्त अपने शिष्यों का जीवन भी शोधते और सुधारते हैं, उन्हें धर्मात्मा, सदाचारी तथा ईशभक्त बनाते हैं। अपने गुरुओं के चरणों में श्रद्धा रखो, उनका आदर करो और उनके सदुपदेशों पर

आचरण करो । ऐसा करने से तुम्हारा जीवन सदा विशुद्ध रहेगा ।

अतिथि देव है । विद्वान् देव है । वेदोपदेशक देव है । उनका सदा आदर-सत्कार करो । उनके चरणों में बैठकर उनके शिक्षाप्रद उपदेश सुनो । उनसे बात-चीत करके अपनी शंकाओं का निवारण करो । उनके उपदेशों तथा प्रेरणाओं से तुम्हारे जीवन नितान्त निर्मल हो जाएंगे ।

सबसे अधिक ध्यान तुम अपने विचारों की पवित्रता पर दिया करो । विचारों की पवित्रता से आचार और व्यवहार पवित्र होता है । जिनके विचार पवित्र होते हैं उन्हीं का जीवन पवित्र होता है । जिनके जीवन पवित्र होते हैं वे ही अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की सच्ची सेवा करते हैं ।

पवमान ! ऐसा कर दे जीवन पवित्र मेरा ।
जग को पवित्र कर दे पावन चरित्र मेरा ।

३ विजयभावना

वयं जयेम । अथर्ववेद ७.५०.४

(वयम्) हम (जयेम) विजय सम्पादन करें ।

प्यारे बच्चो !

अपने हृदयों में विजय की भावना स्थापन करो । अपने प्रिय राष्ट्र और सुपावन देश की युग युग की पराजयों को विजय में परिणत करने की साध तुम्हें सिद्ध करनी है ।

सर्वप्रथम, तुम अपने अपने जीवनक्षेत्र में विजयसम्पादन करो । तुम्हारा अपना जीवन एक बलवान् इन्द्रियग्राम है । इसे विजय करके जितेन्द्रियता का विजयपद प्राप्त करो । तुम्हारी अन्तः बाह्य, समग्र इन्द्रियां सुकृतकारिणी और दुरितनिवारिणी हों ।
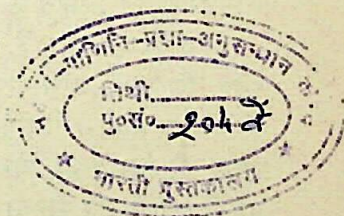
धीर, वीर और बलवान् बनकर विश्व में न्याय और सदाचार की प्रस्थापना तुम्हें करनी है। अन्य देशों द्वारा अपने देश के अपहृत भूखण्डों को पुनः विजय करना है। तुम इतने अदम्य और सक्षम बनो कि तुम्हारी आंखों के सामने कोई राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्र को सताने न पाए, कोई देश किसी दूसरे देश की भूमि का अपहरण न करने पाए। तुम्हारी यही वह विजय होगी जिसे सार्वभौम विजय कहते हैं।

सांस्कृतिक तथा धार्मिक विजय भी तुम्हें सम्पादन करनी है। समग्र पृथिवी पर मानवधर्म और मानवसंस्कृति की प्रस्थापना भी तुम्हें ही करनी है। आज सारी पृथिवी पर मानव पाशविक वृत्तियों से आवृत है। वेद ने कहा है, 'मानव! तू **मनुर् भव**, मनुष्य बन। तुम्हें पृथिवी की सम्पूर्ण मानवप्रजा को मानवता से अलंकृत करना है। मानवता ही मानव का प्राकृत धर्म है। मानवता में ही मानवसंस्कृति निहित है।

एक विजय और है, जिससे 'हृदयसम्राट्' पदवी प्राप्त होती है। स्नेह, शिष्टता, शालीनता, सुशीलता तथा सुसेवा द्वारा मानवहृदयों को विजय करो। जिसके भी सम्पर्क में आओ उसी का हृदय जीतो। हृदय की विजय ही चिरस्थायी विजय है। जो विश्व के मानवों के हृदयों को विजय करता है वह ही विश्वविजेता बनता है।

वयं जयेम।
हम विजयी हों।

४ श्रद्धा

श्रद्धया विन्दते वसु। ऋग्वेद १०.१५१.४

(श्रद्धया) श्रद्धा से (विन्दते) प्राप्त होता है (वसु) धन, अभीष्ट।

प्यारे बच्चो!
यह कैसी अच्छी वेदसूक्ति है! **श्रद्धया विन्दते वसु।** श्रद्धा से किसी भी प्रकार के धन की सहज उपलब्धि और किसी भी अभीष्ट की निश्चित सिद्धि होती है। अपने चौबीसों घण्टों के जीवन में तुम निरन्तर श्रद्धा से ओत-प्रोत तथा आच्छादित रहो। ऐसा करोगे तो तुम सर्वैश्वर्यों से सम्पन्न रहते हुए अपने अभीष्टों को सतत सिद्ध कर रहे होगे।

श्रद्धा ही तुम्हें कुलीन, सुजात, सभ्य, सुशील और शालीन बनाएगी। जन्म से न कोई कुलीन होता है, न सुजात। जिनके जीवनों में शुद्ध श्रद्धा स्थापित हो जाती है वे ही संसार के दुलारे और प्राण-प्यारे बनते हैं, वे ही कुलीन और सुजात कहलाते हैं। अपने जीवन के दैनिक कार्यक्रम में श्रद्धा की ऐसी प्रतिष्ठा प्रस्थापित करो कि तुम्हारे कार्य और अनुष्ठान का आरम्भ, सम्पादन और पूर्ति पूर्ण श्रद्धा के साथ हो।

प्रायः-सायं श्रद्धापूर्वक परम पावन प्रभु को नमस्कार करो। श्रद्धा के साथ माता, पिता, आदि ज्येष्ठ जनों को प्रणाम करके उनका आशीर्वाद प्राप्त करो। स्नान, सन्ध्या, भजन, पूजन, पाठ, जाप, भोजन, छादन, पठन, पाठन, खेल, कूद, व्यायाम, प्राणायाम, सब कुछ श्रद्धा के साथ करो।

विद्यालय में श्रद्धापूर्वक विद्याध्ययन करो। अध्यापकों और अध्यापिकाओं के प्रति श्रद्धोपेत रहो। गुरुओं को सश्रद्ध प्रणाम करो। श्रद्धासहित उनके आदेशों का पालन करो। सेवा के अवसरों पर आत्मनिष्ठा के साथ उनकी सेवा करो।

श्रद्धा तुम्हारे जीवनों को शुद्ध, पवित्र और समुज्ज्वल बना देगी। जो कुछ शुभ, श्रेष्ठ और सुन्दर है उस सबकी सहज उपलब्धि तुम्हें श्रद्धा माता की कृपा से होगी।

श्रद्धा से मिलता ऐश्वर्य,
होता सिद्ध अभीष्ट।

५ शंतम भाषण

वोचेम शंतमं हृदे । ऋग्वेद १.४३.१

[हम] (वोचेम) बोलें (शम्-तमम्) शान्तिप्रद-तम (हृदे) हृदय के लिए ।

प्यारे बच्चो !

इस सूक्ति से वेदमाता तुम्हें एक अतिशय उपयोगी शिक्षा देरही है। इसके मर्म को समझकर यदि तुम इस पर आचरण करोगे तो तुम अपने जीवन में पग पग पर सफलता के दर्शन करोगे और साथ ही सर्वत्र सबके प्यारे बनोगे। इस सूक्ति को तुम इसी समय अर्थसहित कंठाग्र कर लो। जब भी किसी से बात करने का अवसर आए, प्रथम इस सूक्ति को मन ही मन उच्चारो और फिर बोलो।

इस सूक्ति का अर्थ पढ़ते ही तुम प्रसन्नता से उछल पड़ोगे। हम हृदय हृदय के लिए शान्तिप्रदतम वचन बोलें। हम जब भी और जिससे भी बोलें, ऐसे बोलें कि सुननेवाले को हमारी बातों से प्रियता, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति हो।

अपना ऐसा शील और ऐसा स्वभाव बनाओ कि जहां भी और जिस किसी से भी तुम्हें बात-चीत करनी हो, तुम सदा अतिशय शान्तिकारक वचन ही बोलो। तुम न स्वयं उत्तेजित होकर किसी से बोलो और न कभी दूसरों के प्रति उत्तेजित करनेवाले वचन बोलो। यदि कोई उत्तेजित वा क्रुद्ध होकर तुमसे बातें करे तो तुम अपनी ओर से उससे ऐसे प्रिय, मधुर, आदरसूचक तथा समाधान-कारक वचन बोलो कि उसकी उत्तेजना तथा क्रोध का तत्क्षण शमन हो जाए और वह शान्त होकर तुमसे प्रिय भाषण करने लगे।

शं नहीं, शंतर नहीं, शंतम वचन ही सदा बोलो। 'शम्' का अर्थ है शीतल, शान्त, प्रिय। 'शं-तर' का अर्थ है अधिक शीतल,

शान्त और प्रिय। शंतम का अर्थ है अतिशय शीतल, शान्त और प्रिय। शंतम बोलनेवाला सबको अपने वश में कर लेता है। शंतम वक्ता की वाणी अपने-पराए, सबको मोह लेती है। उसका सब आदर करते हैं। सब उसका कहना मानते हैं। शंतम वचन का ही नाम **वशीकरण मन्त्र** है।

> **बोलें हम सबके प्रति वाणी**
> **शीतल, शान्त, मधुर, कल्याणी।**
> **सुनकर शंतम वचन हमारे,**
> **प्रफुल्लित हृदय हों सारे।**

६ विश्वविख्यात

अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्। अथर्ववेद १२.१.५४

(अहम् अस्मि सह-मानः) मैं हूं सह-मान। (भूम्याम्) पृथिवी पर [मेरा] (नाम) नाम (उत्-तरः) उत्कृष्टतर [है, प्रसिद्ध है]।

प्यारे बच्चो !

जो बच्चे महत्त्वाकांक्षी होते हैं वे बड़े होकर महान् बनते हैं। **महत्त्वाकांक्षाएं मानव को महान् बनाती हैं,** यह कहावत अक्षरशः सत्य है। यह सूक्ति जहां महत्त्वाकांक्षा की प्रेरणा कररही है, वहां उसकी पूर्ति का उपाय भी बतारही है। महत्त्वाकांक्षा है, 'पृथिवी पर मेरा नाम प्रसिद्ध हो।' उपाय है, 'मैं सहमान बनूं।'

जो श्रेष्ठ और महान् कार्य करते हैं उन्हीं का संसार में नाम होता है। जो संसार के हित के लिए सुमहान् साधनाएं करते हैं, संसार उन्हीं के नाम से सुपरिचित होता है। मनुष्यमात्र के कल्याण के लिए जो जितना पराक्रम और पुरुषार्थ करता है, पृथिवी पर निवास करनेवाले मानवों की जिह्वा पर उसी का नाम रहता है।

श्रेष्ठ और महान् कार्य अनेक हैं और उनके सम्पादन के लिए तुम्हें सहमान वनना होगा। 'सहः' का अर्थ है सहनशक्ति, कष्टों को सहने की ताकत, धैर्य। **सहमान** का अर्थ है सहनशील, धैर्यशाली। सहनशीलता वा धैर्यशालिता से जो युक्त होता है वह धीर कहाता है। धीर बनकर तुम शुभ, श्रेष्ठ और सुमहान् संसाधों की सतत साधना करो। आसान कार्य तो सभी कर लेते हैं। तुम तो हंसते हंसते कठिन से कठिन कार्य करने का सदभ्यास करो।

विश्वविख्यात महापुरुषों के जीवन बतारहे हैं कि धैर्य के आश्रय से कठिन से कठिन कार्य पूर्ण सफलता के साथ सम्पादन किए जा सकते हैं, धैर्य के आश्रय से विश्वविजयें सम्पादन की जा सकती हैं, धैर्य के आश्रय से बड़े से बड़े आविष्कार किए जा सकते हैं।

मैं हूँ धीर धरा पर, घर घर
सुविख्यात है मेरा नाम।

७ चन्द्रमा बनो

चन्द्रमा नक्तमेति। ऋग्वेद १.२४.१०

(चन्द्रमा) चांद (नक्तम् एति) रात्रि को प्राप्त होता है।

प्यारे बच्चो !

रात्रि में आकर चन्द्रमा क्या करता है ? वह रात्रि में आकर काली रात्रि को गोरी [उजली] बना देता है। सूर्य और चन्द्रमा के स्वभाव में बड़ा भारी अन्तर है। सूर्य उग्र है। वह आता है तो काली रात्रि को भगा देता है। चन्द्रमा शीतल, शान्त और सोम्य है। वह आता है और अपनी प्रशान्त ज्योति से काली रात्रि को ज्योतिर्मयी कर देता है। तुम जानते ही हो, चांदनी रात कैसी सुन्दर और प्यारी लगती है !

तुम भी चन्द्रमा के समान शीतल, शान्त, सोम्य और ज्योतिष्मान् बनकर अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की अंधेरी रात को उजियाली करो और प्रत्येक क्षेत्र में शान्ति तथा सोम्यता का स्रोत बहाओ। मानवों में आच्छादित दु ख, अज्ञान और अविवेक सघन, काली रात्रि के समान हैं। तुम सुविद्वान्, संज्ञानी और सद्विवेकी बनकर प्रत्येक क्षेत्र में शीतल, शान्त चन्द्रिका खिलाओ।

बनो चन्द्रमा,
काली रात्रियों को, बच्चो !
उजियाली कर दो।

८ ज्योतिर्दान

विश्वं ज्योतिर् यच्छ। यजुर्वेद १४.१४

[संसार को] (विश्वम् ज्योतिः यच्छ) संपूर्ण ज्योति दे।

प्यारे बच्चो !

विश्वं ज्योतिर् यच्छ, यह बड़ी प्रेरणाप्रद सूक्ति है। दान का एक रहस्य है, जिसे तुम्हें हृदयंगम कर लेना चाहिए। संचय अथ वा संग्रह दान का मूल है। जो जिस वस्तु का जितना संग्रह करता है वह उस वस्तु का उतना ही दान कर सकता है। जिसने जितना धन संग्रह किया है वह उतनी ही मात्रा में धन का दान कर सकता है। जिसने जितनी विद्या संचय की है उतनी ही विद्या वह अन्यों को दान कर सकेगा।

अन्नदान, वस्त्रदान, द्रव्यदान, इत्यादि अनेक दान हैं और सब ही दान शुभ और श्रेष्ठ हैं। किन्तु ज्योति का दान सर्वश्रेष्ठ दान है। ज्योति के दान से बढ़कर इस संसार में अन्य कोई दान नहीं है। सारा संसार आज अन्धकार में भटकरहा है, ठोकर पर ठोकर

खारहा है और पतनोन्मुख होरहा है। परिणामस्वरूप दुःखों और क्लेशों की वृद्धि होरही है। क्या तुम ज्योतिःसंचय से ज्योतिष्मान् बनकर भूले-भटकों को सीधी और सच्ची राह बताने का संकल्प करोगे? सचमुच, तुममें से वे धन्य—सुधन्य होंगे जो ऐसा शिव संकल्प करेंगे।

तुम्हारे हृदय में जो आत्मज्योति आहित है उसे उद्बुद्ध करो, प्रज्वलित और प्रकाशित करो। सत्पुरुषों के सत्संग आप्त जनों की संगति तथा आत्मसाधना के द्वारा अपनी आत्मज्योति को जगाओ। प्राचीन काल में आचार्य और आचार्या अपने विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियों को जीवन की योगपद्धति से अलंकृत किया करते थे। आजकल ऐसे आचार्य और आचार्या सर्वथा अनुपलब्ध हैं। अतः स्वात्मप्रेरणा से ही तुम्हें यह साधना करनी है।

वेदों के अनुशीलन तथा आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय से तुम अपने मस्तिष्क को ज्ञान, विज्ञान, विद्या और विवेक की ज्योति से द्योतित करो। निर्मल और दिव्य विचारों के संचय से भी तुम्हारा मस्तिष्क ज्योतिष्कोष बनेगा।

हृदय और मस्तिष्क के ज्योतिर्मय होने पर तुम सब भ्रमों और भ्रान्तियों से सर्वथा मुक्त हो जाओगे। तब तुम, निस्सन्देह, संसार को ज्योति का दान करने के अधिकारी बनोगे। हमारे देश में कभी बालक-बालिका भी ज्योति का दान किया करते थे। अष्टावक्र ने आठ वर्ष की आयु से ही ज्योतिर्दान आरम्भ कर दिया था। शंकराचार्य ने सोलह वर्ष के वय से ही विश्व को ज्योति प्रदान करना आरम्भ किया था।

ऋषिपुत्रों और ऋषिपुत्रियो!

तुम भी बालर्षि और बालर्षिका बनकर विश्व को ज्योति प्रदान करने का समारम्भ करो। अपने आत्मसंबल को संभालो और विश्व को ज्योति दो।

विश्वं ज्योतिः यच्छ ।
कर सम्पूर्ण ज्योति प्रदान ।

९ सोमक्षरण

मनसा वाचा सोममव नयामि । यजुर्वेद ७.२५

[मैं] (मनसा, वाचा) मन से, वचन से (सोमम् अव नयामि) सोम उंडेलता हूं ।

प्यारे बच्चो !

यह वेदसूक्ति तुम्हें बड़ी प्यारी लगेगी । देखा तुमने, यह कैसी सुन्दर सूक्ति है !

सोम का अर्थ है मधुर, स्वादिष्ठ रस । मन में मिठास होता है तो वाणी से जो वचन निकलते हैं वे मधुर रस की धारा के समान सृत होते हैं । मन में कटुता होती है तो वाणी से निकला शब्दप्रवाह तीखा होता है ।

वाणी को सोमरूप बनाने के लिए मन की साधना करनी होगी । मन के संकल्प और भावनाएं तभी परिमिष्ट होते हैं जब मानव अपने मन में शुद्ध, शान्त और स्थिर होता है ।

याद रखो, मन 'हृत्प्रतिष्ठ' है, हृदय में निहित है । जिसके हृदय में श्रद्धा, निष्ठा, आस्था और स्नेह आपूर भरा होता है उसी का मन शुद्ध, शान्त और स्थिर रहता है ।

वाणी पर मन का ही नहीं, मस्तिष्क का भी प्रभाव पड़ता है । तुम जानते ही हो, मस्तिष्क उत्तेजित वा गर्म होता है तो मनुष्य को क्रोध आता है । क्रोध आने पर मनुष्य का मन अशुद्ध, अशान्त और चलायमान हो जाता है । क्रोध की अवस्था में मस्तिष्क के साथ मन भी उत्तेजित हो जाता है । मस्तिष्क और मन की उत्तेजना वाणी को अशालीन और अप्रिय बना देती है । अशालीन और अप्रिय वचन

जिसके मुख से निकलते हैं वह सदा दुःखी और उद्विग्न रहता है।

तुम ऐसा अभ्यास करो कि तुम्हारा मस्तिष्क सदा शीतल, और मन सदा शान्त रहे। फिर तुम देखोगे कि तुम्हारे मुख से उंडेला वाणी का प्रवाह ऐसा सरस और सुमधुर होगा कि दुनियां तुम्हें जी-जान से प्यार करेगी, तुम सबकी आंखों के नूर और सबके दिल के सुरूर बन जाओगे।

मन से और वचन से अपने,
मैं उंडेलता हूं मधु सोम।

१० देव सविता की महिमा

मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः। यजुर्वेद ५.१४

(देवस्य सवितुः) देव सविता की (परि-स्तुतिः) महिमा (मही) महती—महान् [है]।

प्यारे बच्चो!

प्रभु की महिमा को पहचानो और उसके परम विश्वासी भक्त बनो।

संसार में प्रत्येक अच्छी वस्तु और प्रत्येक अच्छे प्राणी की स्तुति [प्रशस्ति, प्रशंसा, तारीफ़] की जाती है और की जानी चाहिए। पर देव सविता की स्तुति तो परि-स्तुति है। 'परि' का अर्थ है सब ओर। सब ओर, जिधर देखो उधर ही देव सविता की मही महिमा दृष्टिगोचर होती है।

सकल दिव्य गुणों से युक्त होने से परमात्मा देव कहाता है। सविता का अर्थ है रचयिता, प्रेरक, प्रकाशक, संचालक। सृष्टि का रचयिता होने से प्रभु सविता है। रचित सृष्टि का संचालक होने से परमात्मा सविता है। प्रकाशलोकों में जो प्रकाश है वह सब देव सविता का ही है। हमारे अन्तःकरणों में जो उत्तमोत्तम प्रेरणाएं

होती हैं उन सबका प्रेरक देव सविता ही है।

सृष्टि का जो सुचारु चक्र चलरहा है उसका निरीक्षण और परीक्षण कर-करके वैज्ञानिक आश्चर्यचकित होरहे हैं। सृष्टि के विज्ञान को निरख-निरखकर सभी वैज्ञानिक मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं कि सृष्टि की प्रत्येक गति, कृति और परिणाम निश्चित नियमों के अनुसार होरहे हैं। और तुम जानते हो कि नियमों का निर्धारण नियन्ता के बिना कदापि नहीं किया जा सकता।

स्वामी रामतीर्थ ने अमेरिका में एक बार एक बहुत अच्छी बात कही थी। वह अमेरिकावासियों को बहुत अच्छी लगी थी और, मुझे विश्वास है, वह तुम्हें भी बड़ी रुचेगी। 'वे धन्य हैं जो प्रकृति के अवलोकन के लिए समय निकालते हैं क्यों कि प्रकृति के अवलोकन से उन्हें प्रभु का दर्शन होगा।' निस्सन्देह, प्रकृति के अवलोकन से प्रकर्ता का दर्शन होता है। प्रकृति की हर वस्तु में देव सविता का कमाल [कौशल] और जमाल [सौन्दर्य] निहित है।

प्यारे बच्चो! सृष्टि की हर वस्तु में परम पावन प्रभु की महिमा का अवलोकन करके उसकी स्तुति किया करो। ऐसा करने से तुम स्वयं सर्वथा महिमामय और स्तुत्य बनोगे।

देव सविता की परि-स्तुति है मही।
देव सविता की महिमा महान् है।

११ त्रित : अत्रि

त्रितः कूपेवहितः। ऋग्वेद १.१०५.१७

(त्रितः कूपे अव-हितः) त्रित कुंए में गिर गया।

प्यारे बच्चो!

यह वेदसूक्ति चेतनापरक है। यदि तुमने इस पर ध्यान दिया तो तुम

निहाल हो जाओगे। जिसके जीवन में तीन दोष होते हैं वह पतन के गहरे कूप में गिर जाता है जिससे निकलना दूभर हो जाता है। तीन दोष हैं व्यसनदोष, स्वभावदोष, चरित्रदोष।

सिगरेट, बीड़ी, पान, छाली, तम्बाकू, शराब, चाय, भांग, आदि मादक पदार्थों का सेवन व्यसनदोष में सम्मिलित है। अश्लील सिनेमा, अश्लील साहित्य, अश्लील चित्र भी व्यसन की कोटि में आते हैं। व्यसनों के सेवन से मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य की अपार हानि होती है और अमूल्य जीवनसम्पदा सर्वथा नष्ट हो जाती है। अतः सतर्कता के साथ सब प्रकार के व्यसनों से दूर रहो।

क्रोध, चिड़चिड़ापन, आलस्य, प्रमाद, अधिक सोना, रुष्ट होना, बोल-चाल बन्द कर देना, चुग़ली-चपाटी, दलबन्दी, पार्टीबाज़ी, कटु भाषण, अशिष्टता, आदि बातें स्वभावदोष में सम्मिलित हैं। **स्वभावो हि मनुष्याणां कारणं सुखदुःखयोः**, स्वभाव ही मनुष्यों के सुख-दुःख का कारण है। उत्तम-स्वभाव-वाला व्यक्ति सदा स्वयं सुखी रहता है और दूसरों को भी सुखी रखता है। बुरे-स्वभाव-वाला व्यक्ति जहाँ स्वयं बहुत दुःखी रहता है वहाँ वह दूसरों को भी दुःखी करता है।

ब्रह्मचर्य का नाश, चोरी, असत्य भाषण, अभद्र व्यवहार, हठ, दुराग्रह, स्वार्थपरता, छल, कपट, विश्वासघात, भीरुता, कायरता, आदि चरित्रदोष के अंग हैं। इनसे तुम्हें सदा बचे रहना चाहिए। चरित्रदोष महाघातक दोष है। **चरित्रहीन मानव मानवता का महामलिन कलंक है।**

ये तीनों दोष पतन के अन्धतम कूप हैं। कुविचार, कुभावना और कदाचार, यह त्रित भी प्रत्यक्षतः पतन के भयंकर कूप हैं। नास्तिकता अधार्मिकता, विलासिता का त्रित भी पतनकारी है।

आत्मसाधना द्वारा तीनों प्रकार के त्रित से मुक्त रहकर ही तुम उत्थान के पथ पर सतत गमन करते रह सकोगे। तीन दोषों से युक्त का नाम त्रित है। तीन दोषों से मुक्त का नाम 'अत्रि' है। अत्रि बनो,

उत्थान के सोपान पर चढ़ो।

त्रित कुंए में गिर जाता है।
अत्रि ऊपर उठ जाता है।

१२ द्वेष से बचो

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षत्। अथर्ववेद ३.३०.३

(मा) नहीं (भ्राता) भाई (भ्रातरम्) भाई से (द्विक्षत्) द्वेष—शत्रुता रखे।

बचपन बड़ा भोला होता है। वह सरल, सत्य और प्रेममय होता है। बचपन में हर प्राणी कितना प्यारा लगता है! उसमें तब छल, कपट, झूंठ होता ही नहीं है। बल्कि कहना चाहिए कि इन दुर्गुणों की सत्ता तक का उसे पता नहीं होता है। जब किसी भोले बच्चे को पहली पहली बार यह कहा जाता है कि 'सच बोलो', तब उसे बड़ा अचरज होता होगा कि क्या सच के अलावा भी कोई चीज़ हो सकती है। इसी प्रकार, बच्चा स्नेह के अलावा न कुछ समझता है न जानता है। बालक है ही वह जो अपने पराए, सबसे प्यार करे।

पर बड़ा होने पर बालक धीरे धीरे झूंठ, छल, कपट, छिपाव, घृणा, शत्रुता, आदि दुर्गुणों को अपने से बड़ों से सीखने लगता है। अतः प्रिय बालको! उपरि लिखित वैदिक वाक्य में द्वेष से बचने का परामर्श दिया गया है। यदि बचपन में ही तुम स्नेह और प्रेम का स्वभाव डाल लोगे तो आगे चलकर द्वेष वृत्ति से बचे रहोगे।

द्वेष ने हमारे देश का भीषण विनाश किया है। विदेशी इस देश पर राज्य कर सके। क्यों? हमारे आपसी वैर के कारण। हमारा समाज छोटे छोटे हज़ारों टुकड़ों में इसी कारण विभक्त है कि हम एक दूसरे की वृद्धि से डाह करने, और आगे बढ़नेवाले की टांग

खींचने में संकोच नहीं करते हैं।

द्वेष भाव किसी के प्रति न रखो। बल्कि दूसरे की उन्नति से प्रसन्न होना सीखो। एक महापुरुष ने तो यहाँ तक कहा है कि दूसरे की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। किस प्रकार? एक-एक करके, सब उन्नति करेंगे, तभी तो पूरा समाज उन्नत बनेगा। दूसरे, अन्य को उन्नति करता देखकर स्वयं भी उन्नति करने की प्रेरणा और सीख लेनी चाहिए। इसी को प्रतिस्पर्धा कहते हैं। अपना बल, पौरुष बढ़ाकर दूसरों से आगे निकल जाना स्पर्धा है और यही ईमानदारी तथा न्याय की बात है। पर दूसरे की टांग खींचकर स्वयं आगे निकलना द्वेष है, और यह तो सरासर बेईमानी तथा अन्याय है। बच्चो! तुम्हीं सोचो, ईमानदार बनना चाहिए वा बेईमान?

वेद की इस सूक्ति को शब्दार्थ सहित याद कर लो, और सदा इसके अनुसार मनोभाव बनाए रखो।

भाई भाई से करे न द्वेष।
सब मिलकर रहें हमेश।

१३ जीवन का संशोधन

उद् राधो गव्यं मृजे, नि राधो अश्व्यं मृजे। ऋग्वेद ५.५२.१७

[मैं] (गव्यम् राधः) गव्य धन को (उत् मृजे) उत्तमतया शोधता हूं।
[मैं] (अश्व्यम् राधः) अश्व्य धन को (नि मृजे) निरन्तर शोधता हूं।

प्यारे बच्चो!

यह वेदसूक्ति तुम्हें दो महान् धनों के शोधन का उद्बोध प्रदान कर-रही है। इस पर कटिबद्धता से आचरण करो और सुमहान् बनो।

'गव्य धन' नाम है इन्द्रियरूप धन का और **'अश्व्य धन'** नाम है आत्मिक धन का।

तुम्हारा शरीर अनेक इन्द्रियों का समूह है। सभी इन्द्रियाँ जीवन के सुष्ठु निर्वहन तथा साधु विकास में तभी पूर्णतया सहायक होती हैं जब उन्हें सदैव शुद्ध-पवित्र रखा जाए। सभी इन्द्रियों को न केवल जल से धोकर शुद्ध रखा जाए, उनके व्यवहार को भी शोधा जाए। तब ही सम्पूर्ण इन्द्रियधन शुद्ध माना जाता है। इन्द्रियों को उभयत: शुद्ध रखने से तुम्हारा चरित [व्यवहार] और चरित्र [आचार] दोनों धवल-निर्मल रहेंगे। शुद्ध व्यवहार और पवित्र आचार के संयोग का नाम ही सदाचार है।

इन्द्रियधन के शुद्ध होने पर आत्मधन अनायास ही शुद्ध हो जाता है। ईश्वरोपासना, स्वाध्याय और सत्संग के बिना आत्मशोधन में पूर्णता नहीं आती है। अत: तुम नित्य ही योगासन में बैठकर योगाभ्यास की रीति से ध्यान और वेदव्याख्या-ग्रन्थों का स्वाध्याय अवश्य किया करो। साथ ही सत्संग में जाकर सत्पुरुषों के उपदेश भी सुना करो।

इन्द्रियधन तथा आत्मधन, दोनों को सदा ही शुद्ध रखने से तुम्हारा जीवन सुमहान् बनेगा और तुम लोक-परलोक की विजय सम्पादन करोगे।

शोधो सदा इन्द्रियधन को।
बोधो सदा आत्मिक धन को।

१४ वेदप्रचार

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। यजुर्वेद २६.२

[मैं] (इमाम् कल्याणीम् वाचम्) इस कल्याणी वाणी को (जनेभ्यः) जनों के लिए, विश्व के सकल मानवों के लिए (यथा) यथावत् (आवदानि) बोलूं, उपदेशूं, प्रचारूं।

प्यारे बच्चो !

महत्त्वाकांक्षा ही मानव को महान् बनाती है। जितनी महान् तुम्हारी आकांक्षा होगी, तुम उतने ही महान् बन पाओगे। उपर्युक्त सूक्ति में तुम्हारे लिए एक महत्तम और श्रेष्ठतम आकांक्षा है, जिसकी पूर्ति की साधना से तुम विश्ववन्द्य और सर्वपूज्य बन जाओगे।

तुम यह तो जानते ही हो कि वेदवाणी ही वह वाणी है जिसे इस सूक्ति में **'कल्याणी वाणी'** कहा गया है।

इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए तुम अभी से दो अभ्यास आरम्भ कर दो। यदि तुमने अपने विद्यालय की पढ़ाई में संस्कृत-विषय नहीं लिया हुआ है तो तुम नित्य पन्द्रह मिनट किसी विद्वान् से अभ्यासक्रम से संस्कृत पढ़ा करो और पन्द्रह मिनट ही नित्य वेदमन्त्रों की व्याख्याओं का स्वाध्याय किया करो। साथ ही, वैदिक सत्संगों में जाकर वेदोपदेश सुना करो। ऐसा करने से तुम्हारा वेद में प्रवेश हो जाएगा और तुम्हें वेदोपदेश करने की शैली ज्ञात हो जाएगी। बड़े होकर संस्कृत तथा वेद का विशेष अध्ययन करना। इस प्रकार ऋषि, ऋषिका बनकर तुम स्वदेशं तथा विश्व में साचार वेदप्रचार करना।

मैं प्रचार करूं जगती में।
इस कल्याणी वेदवाणी का।

१५ सुन्दर वाज

सुपेशसं वाजमा भरा नः। ऋग्वेद १.६३.८

(सु-पेशसम् वाजम्) सु-रूपमय वाज (आ भर नः) प्राप्त करा हमें।

प्यारे बच्चो !

जिस राष्ट्र में मूर्ख और दुर्बल नागरिक-नागरिकाओं की संख्या अधिक होती है वह राष्ट्र न अपने देश की सीमाओं की रक्षा कर

पाता है, न अपनी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता को सुरक्षित रख पाता है। हमारे देश और राष्ट्र का वर्तमान इसी लिए शोचनीय है कि यहाँ की अधिकांश ज़नता मूर्ख और कृशकाय है। इस देश और राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि इसके भावी नागरिक और नागरिका सुमतिमान् और शक्तिसम्पन्न हों।

आज के बालक-बालिक ही भावी नागरिक-नागरिका हैं। अतः तुम अपने आपको बुद्धिमान् और शक्तिसम्पन्न बनाओ। इसी से तुम्हारा अपना कल्याण होगा और इसी से तुम्हारे देश तथा राष्ट्र का उत्थान होगा। वेद की यह सूक्ति तुम्हें यही सन्देश देरही है। तुम इस सूक्ति को अर्थसहित याद करो और उसके अनुसार आचरण करो। कितनी अच्छी प्रार्थना है यह, 'प्रभो! हमें सुशोभन वाज प्राप्त करा!' वाज का अर्थ है ज्योति, शक्ति और संग्राम। ज्योति और शक्ति के संयोग से ही संघर्षों और संग्रामों में विजय-साफल्य की प्राप्ति होती है।

व्यर्थ की बातों में समय न खोकर तुम सदैव ऐसे वातावरण में रहो जिसमें तुम्हारी बुद्धिरूप ज्योति का विकास तथा प्रकाशन हो और तुम्हारा शरीर शक्ति से आपूर हो। मन लगाकर विद्या पढ़ो, उत्तम ग्रन्थों का अनुशीलन करो, महापुरुषों के जीवनचरितों का पारायण करो, अपने देश और राष्ट्र की समस्याओं पर चर्चा करो, सत्संगों में जाकर विवेक-वचन सुनो। इस सबसे दिन-प्रतिदिन तुम्हारी बुद्धि का प्रकाशन और तुम्हारे विवेक का उदयन होगा। व्यायाम, प्राणायाम, मालिश, श्रम, संयम और पौष्टिक आहार के आश्रय से अपने शरीरों को शक्तिपुंज बनाओ।

शोभन बुद्धि, सुन्दर स्वास्थ्य,
रहें हमें दोनों सम्प्राप्त।
संघर्षों और संग्रामों में
विजय-सफलता मिले निरन्तर।

१६ ओज : बल

उग्रं व ओजः, स्थिरा शवांसि । ऋग्वेद ७.५६.७

(वः ओजः उग्रम्) तुम्हारा ओज उग्र [हो] । ([वः] शवांसि स्थिरा) [तुम्हारे] बल स्थिर [हों] ।

प्यारे बच्चो !

यह वीरसूक्ति है । इसे सदा सर्वत्र गाया करो ।

ओजः का अर्थ है उमंग, उत्साह, साहस । शवः का अर्थ है बल । ओज हो तुम्हारा उग्र, प्रखर, प्रचण्ड, और बल हों तुम्हारे स्थिर, अडिग, अजेय । 'शवांसि' शब्द बहुवचन है । बुद्धिबल, आत्मबल, शरीरबल, मनोबल, शस्त्रबल, सैन्यबल, चरित्रबल, इत्यादि जितने बल हैं, सब स्थिर हों । जहां ओज के साथ संबलों का योग होता है वहीं राष्ट्र को विजय, श्री, स्वस्ति, यश और सम्पदाओं की उपलब्धि होती है । अतः अपने साहस को सदा ऊंचा और अपने बलों को सदैव स्थिर रखो ।

ओज तुम्हारा उग्र रहे और
संबल स्थिर तुम्हारे ।
विश्वविजेता, विश्वप्रणेता,
बनो विश्व के प्यारे ।

१७ विक्रम : पराक्रम

वितरं वि क्रमस्व । ऋग्वेद ८.१००.१२

(वि-तरम्) वि-तर (वि क्रमस्व) वि-क्रम कर ।

प्यारे बच्चो !

यह कितनी महत्त्वपूर्ण सूक्ति है ! वि-तर का अर्थ है विविध-तर,

विशेष-तर, अधिकाधिक । वि क्रमस्व का अर्थ है वि-क्रम कर, विशेष पुरुषार्थ कर, अधिकाधिक श्रम कर ।

जो व्यक्ति विविध क्षेत्रों में, ज्ञान-विज्ञान के विशिष्ट विषयों में अधिकाधिक परिश्रम और पुरुषार्थ करते हैं वे बहुत ऐश्वर्यशाली और सौभाग्यशाली बनते हैं । तद्विपरीत, जो व्यक्ति एकांगी होते हैं वे स्वभावतः आलसी और प्रमादी होते हैं । परिणामस्वरूप वे दीन, हीन और हेय अवस्था में जीवनयापन करते हैं ।

तुम अभी से कठोर जीवनपद्धति के अभ्यासी बनो । हर उपयोगी और वाञ्छनीय कार्य परिश्रम और तत्परता के साथ करो । छोटे से छोटा काम मनोयोग और मेहनत के साथ करोगे तो बड़े से बड़े काम भी तुम मुस्तैदी और मशक्क़त के साथ करोगे । इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषार्थ करने का तुम्हारा स्वभाव बन जाएगा । बस, फिर तुम विजयी वीर बन जाओगे ।

विविध क्षेत्रों में, विषयों में
करो पराक्रम और पुरुषार्थ ।

१८ यश

अस्मे धेहि श्रवो बृहत् । ऋग्वेद १.९.८

[प्रभो] ! (अस्मे) हममें, हमारे अन्दर (धेहि) धर, स्थापन कर (श्रवः) यश (बृहत्) महान्, विशाल, व्यापक ।

इस सूक्ति को तुम चलते फिरते, खेलते कूदते, काम काज करते गाया करो । इसे शब्दार्थ सहित कण्ठाग्र कर लो । प्रभो ! हमें विशाल और व्यापक यश प्राप्त करा, छोटा और संकुचित यश नहीं । व्यापक यश कमाने के लिए पहली बात यह है कि तुम यशस्वी बनने की इच्छा करो । जहां चाह तहां राह । इच्छा होती है तो उपाय भी

सूझता है। इच्छा यश की पुरोगामी [आगे चलनेवाली] है। जब तुम्हारे अंदर यश की कामना रम जाएगी तब तुम सदा ऐसे ही काम करोगे जिनसे तुम्हें यश की प्राप्ति हो। यश की इच्छा जागरित रहने पर तुम सदा ऐसे ही काम करोगे जिनसे तुम्हारा यश हो।

बुरे वा ग़लत काम तो कभी करने ही नहीं चाहिए। अच्छे काम भी ऐसी उत्तम रीति से करो कि हर काम में तुम्हें शाबाशी मिले। यश:प्राप्ति के लिए केवल अच्छे काम करना ही पर्याप्त नहीं है, अच्छे काम भी अच्छे प्रकार करने चाहिएं। बस, ऐसा नियम बना लो कि जब जो काम करो, बहुत बढ़िया ढंग से करो। प्रत्येक कार्य ऐसी स्वच्छता, शोभनीयता और शालीनता के साथ करो कि देखनेवाले तुम्हारी हर चेष्टा पर मुग्ध होकर तुम्हारी 'वाह-वाह' करें, तारीफ करें और तुम्हारे प्रति साधुवाद तथा 'शाबाश' कहें। ऐसा करोगे तो तुम ज्यों ज्यों बड़े होते जाओगे त्यों त्यों तुम्हारा सब ओर अधिकाधिक यश फैलता चला जाएगा और एक दिन सारा संसार तुम्हें जानेगा और मानेगा।

हममें स्थापन कर, प्रभो !
यश विशाल, व्यापक, सुमहान्।

१६ प्रज्वलित जीवन

अग्निनाग्निः समिध्यते। ऋग्वेद १.१२.६

(अग्निना अग्निः सम्-इध्यते) अग्नि से अग्नि प्र-ज्वलित किया जाता है।

प्यारे बच्चो !

यह एक बहुत सीधी और सरल बात है और इसकी साधना भी

सहज और स्वाभाविक है। दीपावली की सायं सन्ध्या है। बहुत से दीपक पंक्तिबद्ध रखे हैं। हर दीपक में तैल भरा है और बत्ती लगी हुई है। दीपक जल नहीं रहे हैं और रोशनी नहीं होरही है। एक दीपक को दियासलाई से जला दो। वह जला हुआ एक दीपक अ-जले दीपकों की बत्तियों को क्रमशः स्पर्श करता चला जाता है और प्रत्येक दीपक प्रज्वलित होकर प्रकाश करने लगता है। अब सारे दीपक जगमगारहे हैं। हर दीपक रोशन चिराग़ बन गया है।

जिस दिल में आग लगती वह दिल चिराग़ होता।
वह ही अंधेरियों में है रोशनी जगाता।

इसी प्रकार, मानव का अपना एक प्रकाशित जीवन अन्य असंख्य जीवनों को प्रकाशित कर देता है। जिन्होंने अपने जीवन को प्रकाशित किया उनके जीवन से लाखों, करोड़ों जीवन प्रकाशित हो गए और वे ही महापुरुष वा मही महिला कहलाए। तुम भी अपने जीवन को प्रज्वलित करके मानवजाति को ऐसी रोशनी से रोशन करो कि उन्हें जीवन का सही रास्ता दिखाई दे जाए और सही रास्ते पर चलकर वे अपनी ज़िन्दगी को सुधन्य और सफल बना सकें।

विद्या, ज्ञान और विवेक ही वे साधन हैं जिनसे तुम्हारे जीवन प्रज्वलित अग्नि अथ वा रोशन चिराग़ बन जाएंगे। विद्या से ज्ञान की प्राप्ति होती है, तो सत्पुरुषों के संग और आत्मचिन्तन से विवेक की उपलब्धि होती है। ज्ञान तुम्हारे मस्तिष्क को प्रकाशित करेगा और विवेक तुम्हारे आत्मा को। ज्ञान तुम्हारी मति और बुद्धि को प्रबुद्ध करेगा और विवेक तुम्हारे मन, चित्त और आत्मा को। ज्ञान और विवेक के संयोग से तुम सूर्य और चन्द्रमा के समान मानवों को मानवता के आलोक से आलोकित कर दोगे।

अग्नि से अग्नि जलता है,
ज्योति से ज्योति जलती है।

दीपक से दीपक जलता है,
सूरज से जगती जगती है।

२० सुन्दर मस्तिष्क

शिरो मे श्रीः । यजुर्वेद २०.५

[मेरा] (शिरः) शिर [है] (मे श्रीः) मेरा सौन्दर्य ।

प्यारे बच्चो !

यह कितनी सुन्दर सूक्ति है ! अर्थ भी इसका कितना सुन्दर है !

संसार में मनुष्यकृत जहां जो और जितना सौन्दर्य है वह सब मनुष्य के सुन्दर मस्तिष्क की ही आभा है। विभिन्न भाषाओं के विविध काव्यों में कवियों के सुन्दर मस्तिष्कों का ही सौन्दर्य है। जितने भी सुन्दर भवन, सुन्दर बाग़, सुन्दर कलाकृतियां हैं सब विश्वकर्माओं [एंजिनियरों] तथा कलाकारों के सुन्दर मस्तिष्कों की ही रचनाएं हैं। सारे आविष्कार सुन्दर मस्तिष्कों की ही आविष्कृतियां हैं।

तुम अपने मष्तिष्क को ऐसा सुन्दर बनाओ कि तुम जहां भी जाओ और जहां भी होओ, सर्वत्र सौन्दर्य पूर दो। तुम्हारा सुन्दर मस्तिष्क ही तुम्हारे जीवन को सुन्दर बनाएगा।

मस्तिष्क को सुन्दर बनाने के चार सुन्दर साधन हैं। प्रथम साधन है चिन्तन की पवित्रता और गहनता। दूसरा साधन है मस्तिष्क की शीतलता तथा स्थिरता। तीसरा साधन है सुन्दर संस्कारों का मस्तिष्क में समंकन। चौथा साधन है मस्तिष्क को सुन्दर कल्पों ['इमेजज़'] और सुन्दर कल्पनाओं [इमैजिनेशन्स्] से संजोना।

सुन्दर मस्तिष्क नितान्त निर्मल,निर्विकार, गहन, शान्त, प्रशान्त

और सुवासित होता है । इस सूक्ति को अपने जीवन का अंग बनाओ, चलते फिरते गीत यह गाओ ।

मेरा शिर मेरा सौन्दर्य,
मेरा शिर जग का सौन्दर्य ।
मेरा शिर है मेरी आभा,
मेरा शिर है मेरी प्रतिभा ।

२१ यशस्वी मुख

यशो मुखम् । यजुर्वेद २०.५

[मेरा] (मुखम्) मुख [है मेरा] (यशः) यश ।

आशांकुरो !

तुम्हारे लिए फिर यह एक बड़ी सुन्दर सूक्ति है ।

अनेक बातें हैं जिनसे यश की प्राप्ति होती है । किन्तु सुभाषी और सुवक्ता होनें से जितनी शीघ्रता से जितना व्यापक यश प्राप्त होता है उतना अन्य प्रकार से नहीं । और यश विश्वविजय का सर्वसुलभ साधन है ।

भाषण और भक्षण, दो काम मुख से किए जाते हैं । भक्षण का महत्त्व तो इतना ही है कि चबा-चबाकर खाओ और स्वास्थ्य के लिए खाओ ।

सुभाषी बनने के लिए सदा सत्य ही बोलो, और प्रिय तथा मधुर शब्दों में बोलो । जिससे भी बोलो, आदर के साथ बोलो । जब भी बोलो, हित की बात बोलो । सदा स्मरण रखो, मुख के ऊपर मस्तिष्क है और नीचे हृदय । जब भी और जिससे भी बोलो, अपने शान्त मस्तिष्क के सुविचार और अपने हृदय की सम्पूर्ण सहृदयता

के साथ बोलो ।

सुवक्ता बनने के लिए तुम वाणी की साधना करो । सुवक्ता होना मानवजीवन की सर्वोपरि साधना और सर्वश्रेष्ठ कला है । जिस विषय पर बोलो, सुविचारित बोलो और यथाक्रम तथा यथाविधि बोलो । सर्वप्रथम, श्रोताओं को भद्र और शालीन सम्बोधनों से सम्बोधित करो । भाषण करते हुए न कभी विषयान्तर होना चाहिए न अप्रासंगिक होना चाहिए । साथ ही, ऐसा बोलो कि सुननेवालों के ज्ञान में वृद्धि हो और उनके जीवनों का विकास हो । बोलने के लिए न बोलो । कुछ समझाने और कराने के लिए बोलो ।

मेरा मुख है यश का साधन,
अपि च विश्वविजय का साधन ।

२२ धैर्य

मित्रं मे सहः । यजुर्वेद २०.६

(सहः) धैर्य [है] (मे मित्रम्) मेरा मित्र ।

पुत्रो और पुत्रियो !

प्रथम, इस सूक्ति का शब्दार्थ याद करो, फिर इसका मर्म समझो और इसका अभ्यास करो । ऐसा करके तुम, निश्चय ही, सदा सफल होगे और महतो महान् बनोगे ।

धैर्य तुम्हारा मित्र है, परम मित्र है, सच्चा और अच्छा मित्र है । सहनशीलता, यत्नशीलता, कठिनाइयों को पार करने का सदभ्यास, मुसीबतों और बाधाओं का मुक़ाबला करने का सहज साहस, ऐसा इस प्रकार का आशय सह शब्द में अन्तर्निहित है । एक शब्द में, 'सह' का अर्थ है धैर्य । धैर्य के धनी को वेद में 'धीर' कहा गया है ।

धैर्य ही वीरता और शूरता का, वीर्य और शौर्य का, उत्कर्ष और उत्थान का सम्पादक है। धैर्य ही विजय और साफल्य की कुञ्जी है। धैर्य में ही ध्रुवता का निवास है। धैर्यवान् ही ध्रुव, अविचल, अकम्प, संस्थित और सतत समाहित रह पाता है। धैर्य लम्बी से लम्बी मंजिल को लघुतम कर देता है और कठिन से कठिन साधना को सरलतम बना देता है। धैर्य वह अमोघ साधन और अमोघ शक्ति है जो लोक और परलोक की सकल साधनाओं को, निश्चय ही, सिद्ध करके दिखाता है।

जहां धैर्य होता है वहां भोग, विलास, विकार, वासना, पाप, उत्तेजना, विषाद और निराशा का कदापि निवास नहीं होता है। वहां तो सन्तोष, शान्ति, प्रसन्नता, उत्साह और विश्वास का महा-सागर उमड़ता रहता है। धैर्य मानव को यति, योगी, निर्मल, निर्विकार बना देता है। धैर्य मिट्टी को कुन्दन बना देता है, आलस्य और प्रमाद को मार भगाता है और साधक को परम पुरुषार्थ, परम पराक्रम और परम अध्यवसाय प्रदान करता है। धैर्य ही भय और संशय से मुक्त रखता है।

जिसका धैर्य मित्र है उसका बेड़ा पार।
धैर्य से जो शून्य है, डूबेगा मझधार।

□

पाठक से

वेद-संस्थान इस पुस्तक की विषय-वस्तु, लेखनशैली और आकार-प्रकार के बारे में आपके विचारों के लिए आभारी होगा। अन्य कोई सुझाव आप देना चाहें तो उन्हें जानकर भी हमें प्रसन्नता होगी। हमारा पता है : बाबू मोहल्ला, ब्यावर रोड, अजमेर, भारत।

बालकों और तरुणों के लिए उपयोगी
तथा शैक्षणिक विषयों पर
स्वामी विद्यानन्द 'विदेह' की कृतियां

भारत के अध्यापकों से (प्रथम भाग) चतुर्थ संस्करण			०-५० पैसे
भारत के विद्यार्थियों से	षष्ठ संस्करण		रु. १-००
वैदिक बाल-शिक्षा			रु ४.००
प्रथम भाग	सप्तम संस्करण	रु १.००	
द्वितीय ,,	षष्ठ ,,	,, १.००	
तृतीय ,,	चतुर्थ ,,	,, १.००	
चतुर्थ ,,	द्वितीय ,,	,, १.००	
वैदिक स्त्री-शिक्षा (दो भाग)			रु १.६०
प्रथम भाग	तृतीय संस्करण	०.८० पैसे	
द्वितीय ,,	प्रथम ,,	०.८० पैसे	
शिक्षा-शास्त्र [वेदव्याख्या-ग्रन्थ, षष्ठ पुष्प] द्वितीय संस्करण			रु २.००
संस्कृत-शिक्षा (दो भाग)			रु १.२०
प्रथम भाग	पंचम संस्करण	०.४० पैसे	
द्वितीय ,,	चतुर्थ ,,	०.८० पैसे	
संस्कृत-स्वयं शिक्षक (दो पुष्प)			रु ३.५०
प्रथम पुष्प	चतुर्थ संस्करण	रु १.५०	
द्वितीय ,,	द्वितीय ,,	रु २.००	

'विदेह'-वाङ्मय की विस्तृत सूची निम्न पते से निःशुल्क मंगाएं :
वेद-संस्थान, बाबू मोहल्ला, ब्यावर रोड, अजमेर ३०५००१

जन्म : १५ नवम्बर, १८९९ ई. । निधन : ५ मार्च, १९७८ ई. । वेद-संस्थान (अजमेर, दिल्ली) के संस्थापकाध्यक्ष । वेदों के मर्मज्ञ व्याख्याकार, चिन्तक, कवि और संन्यासाश्रमी सन्त । वाणी में अद्‌भुत माधुर्य और हृदय को छू लेने की क्षमता । व्यक्तित्व जो तत्काल आकर्षित कर लेता था आत्मीयता, स्नेह, सरलता से । सतत कर्मरत, प्रतिक्षण साधनामय, भक्ति और निष्ठा से ओत-प्रोत जीवन । लेखन की शैली ललित, प्रसादगुणयुक्त, अनावश्यक विस्तार से रहित ।

'विदेह' का जीवन वेद और योग को समर्पित था । उन्होंने लोहे के चने समझे जानेवाले वेद को आवाल-वृद्ध, प्रत्येक हिन्दी-भाषी के लिए अतिसरल और रोचक, दैनंदिन जीवन में उपयोगी और प्रेरकग्रन्थ बनाने में अभूतपूर्व और आश्चर्यकारी सफलता पाई है । उनकी वेद-व्याख्या वेद को मानव और मानवता की अनिवार्य आवश्यकता के रूप में प्रस्तुत करती है, वेद के वेदत्व को निखारती है और उसे जीवन-ग्रन्थ, मानवधर्म-शास्त्र के रूप में प्रस्तुत करती है ।

'विदेह' के चिंतन से जीवन का कोई भी पक्ष अछूता नहीं रहा है । संन्यासी और योगी होने पर भी, उन्होंने परिवार और गृहस्थ-जीवन पर पर्याप्त चिंतन, प्रवचन और लेखन किया है । 'वैदिक बाल-शिक्षा' पुस्तकमाला में वेद की चुनीदा सूक्तियों और सरल ऋचाओं के आधार पर बच्चों को संबोधित, जीवनोपयोगी, उदार मानवता के पोषक १०६ उपदेश 'विदेह' की अपनी अनूठी शैली में संकलित हैं । इन शिक्षाओं का लाभ बच्चे तो लेंगे ही, युवक, प्रौढ, वृद्ध भी ले सकते हैं क्यों कि वेद मानवमात्र के लिए हैं, और अच्छी बातें सबके लिए लाभकर होती हैं ।

एक रुपया पच्चीस पैसा